अध्याय छह

बैंकिंग, व्यापार तथा वाणिज्य

बैंकिंग एवं वित्त

जिले में महाजनी (देशी बैंकिंग) का इतिहास :

महाजनी इस जिले के लिये नयी नहीं है और यह सैकड़ों वर्षों से किसी न किसी रूप में विद्यमान है। पहले महाजन तथा ताल्लुकेदार मुख्य साहूकार (money-lenders) होते थे। ताल्लुकेदार अपने काश्तकारों को ऋण देते थे और ब्याज के रूप में अच्छी खासी धनराशि वसूल करते थे, परन्तु पड़ोसी जिलों की अपेक्षा इस जिले में काश्तकारों की हालत अच्छी थी, क्योंकि यहां वे ब्याज का भुगतान अनाज के रूप में भी कर सकते थे। इस प्रणाली से कृषकों को फसल खराब होने पर जो कठिनाइयां होती थीं उनसे पार पाने में उन्हें सहायता मिलती थी। परन्तु ब्याज की ऊंची दरों का कुप्रभाव, सभी वर्गों की वित्तीय दशा पर पड़ता था। अग्रिम ऋण अनाज के रूप में दिये जाते थे जो कि ऋण का सबसे अधिक सामान्य रूप था और उसका भुगतान भी वस्तु के रूप में किया जाता था। ऊंची जाति के काश्तकारों को जब मूलधन वापस करना होता था तो उसकी ब्याज की दर 25 प्रतिशत रहती थी, किन्तु उनसे निम्न-स्तर तथा नीची जाति के पड़ोसियों के लिये यह दर 30 प्रतिशत रहती थी। नकद अग्रिमों की ब्याज की दर छोटी धनराशि के लेन-देन के मामलों में दो से तीन प्रतिशत प्रतिमास होती थी, परन्तु जमानत पर दिये जाने वाले बड़े ऋणों के मामलों में ब्याज की दर 15 से 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की रहती थी। कुछ सूदखोर जब उनसे छोटे-मोटे ऋण लिये जाते थे तो साधारण नकद ब्याज के साथ-साथ वस्तु के रूप में भी ब्याज लेते थे। यह बढ़ा हुआ ब्याज कभी-कभी प्रत्येक रुपये के कर्ज के लिये पांच सेर अनाज होता था और यह एक फसल के लिये होता था। ब्याज के अन्य सामान्य रूप उगाही तथा नौदासी थे। उगाही पर लिया गया ऋण नकद ऋण के रूप में होता था जिसमें प्रत्येक दस रुपये के ऋण पर एक वर्ष तक एक रुपया प्रति मास वसूल किया जाता था। यह पद्धति इस जिले में अब भी चल रही है। नौदासी के रूप में लिये गये ऋण में काश्तकारों को विवाह के खर्च के लिये अग्रिम दिया जाता था और उस पर परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग दर पर ब्याज लिया जाता था।

1869 में इस जिले में 666 महाजन (बैंकर्स) थे, इनके अतिरिक्त 1,058 अनाज विक्रेता तथा 1,282 व्यापारी थे, जो ज़रूरतमन्द किसानों या नगर के छोटे-छोटे व्यवसायियों को भी उधार देते थे। इनमें से एक-तिहाई महाजन मिसरिख तहसील में रहते थे। वस्तुतः सीतापुर का नगर तथा मिसरिख रुपये के लेन-देन के प्रमुख केन्द्र थे। इनके बाद बिसवां तथा सिधौली आते थे। अनाज विक्रेता कृषकों को सामान्यतः अपनी शर्तों पर ऋण देते थे, जिससे कि फसल के समय वे (विक्रेता) सस्ती दरों पर अनाज प्राप्त कर सकें। दूसरी ओर महाजन कर्ज सामान्यतः नकद धनराशि के रूप में लेते थे।

ग्रामीण ऋणग्रस्तता:—इस जिले में कृषक अच्छी फसल के लिये सामान्यतः प्रकृति की उदारता पर निर्भर रहते हैं और जब कभी वे कठिन परिस्थिति में पड़ जाते हैं तो उनके पास गुजर-बसर करने के लिये कुछ भी नहीं रह जाता। इसमें जमींदार भी अपवाद नहीं थे, क्योंकि बहुत से जमींदार अपने व्यक्तिगत अपव्यय के कारण ऋणग्रस्त रहते थे। वर्ष 1901 में इस जिले में सहकारी ऋण प्रणाली वाले दो ग्रामीण बैंक खोले गये, परन्तु दो वर्षों के भीतर ही इनमें से एक समाप्त हो गया और दूसरा बैंक, किओंती बैंक जो (हरगांव के पास) पिपरा में था उसकी स्थिति अच्छी नहीं थी। इसका वित्तपोषण प्रतिपालक अधिकरण (कोर्ट ऑफ वार्डस्) द्वारा होता था जिसने इसे 470 रुपये का अग्रिम दिया था। पहले वर्ष में चार ग्रामों के सैंतालीस व्यक्ति इसके सदस्य बने थे। इसने बीज तथा पशु क्रय करने के लिये 1 प्रतिशत प्रति वर्ष के ब्याज पर 14.50 रुपये प्रति व्यक्ति के औसत के हिसाब से तेंतालिस ऋण दिये। लाभ नाममात्र का होने के कारण इस बैंक को बन्द कर देना पड़ा। लगभग इसी प्रकार की एक निजी संस्था बिसवां बैंक थी जिसके मालिक मोइज़ुद्दीनपुर के सेठ रघुबर दयाल थे। वर्ष 1920 तक यह एक केन्द्रीय सहकारी बैंक हो गया और वर्ष 1924 तक इसका प्रबन्ध नौ डायरेक्टरों द्वारा किया जाने लगा तथा इसके सौ अंशधारी (shareholder) थे तथा इसकी चालू पूंजी (working capital) 81,300 रुपये थी।

यूनाइटेड प्राविन्सेज बैंकिंग इन्क्वायरी कमेटी (1929–30) के अनुमान के अनुसार संपूर्ण जिले में ऋण लेने वालों (debtors) का प्रतिशत 50 था और वर्ष 1939 के बन्दोबस्त की रिपोर्ट के अनुसार तहसील सिधौली में 1930 में ऋण-ग्रस्त कृषकों का प्रतिशत 42 था। विश्व में मूल्य-ह्रास के पूर्व, औसत ऋण दो वर्षों के लगान से कुछ ही कम था। मूल्यह्रास के दौरान कीमतें गिरीं और उसके परिणाम स्वरूप ऋणग्रस्त काश्तकारों की संख्या में वृद्धि हुई और उनकी ऋण भुगतान करने की क्षमता कम हो गयी तथा उनके ऋण और अधिक बढ़ गये। साहूकारों द्वारा वसूल की जाने वाली ब्याज की दरें बहुत अधिक थीं। पर्याप्त नियंत्रण के अभाव में तथा ऋण लेने वाले लोगों के यूनाइटेड प्राविन्सेज एग्रीकल्चरिस्ट रिलीफ ऐक्ट, 1934 के उपबन्धों से अनभिज्ञ होने के कारण ब्याज की उचित दरें लागू नहीं हुईं। ब्याज की धनराशि अत्यधिक वसूल किये जाने के कारण कृषक के लिये जीवन निर्वाह कठिन हो गया और वह अपेक्षाकृत निम्न आर्थिक स्तर पर आने के लिये मजबूर हो गया।